# THE MAN WHO SAW ME



Ferdinando Frega

# जिलेट: वह आदमी जिसने मुझे देखा

मुझे कभी कोई गुरु पाने का सौभाग्य नहीं मिला।

ज़िंदगी के पहले सत्ताईस साल मेरा वास्ता लगभग सिर्फ़ औरतों से पड़ा। हर मिज़ाज की औरतें, हर संवेदना की, हर बौद्धिक और इंसानी क़द की। शायद ज़िंदगी मुझे बस एक बुनियादी सच याद दिलाना चाहती थी: मैं भी एक औरत का बेटा था। और बेटा भी कैसा।

फिर आया 1992।

एक चुनावी अभियान कोसेंज़ा के एक उद्यमी के इर्द-गिर्द खड़ा किया गया था, जो शिक्षा के क्षेत्र में काम करता था और आगे चलकर, सारी उम्मीदों के उलट, इटली की संसद का सदस्य बना। उस अभियान ने बहुत-सी चीज़ों का रुख़ बदल दिया। राजनीति की वजह से नहीं, बल्कि उन लोगों की वजह से जिनसे मिलने का मौक़ा मुझे मिला। संभावनाओं का दरवाज़ा उन्होंने ही खोला।

मैं एक नौसिखिया था, ऐसी दुनिया में जो किसी-न-किसी का होने पर टिकी थी। कोई समझ नहीं पाता था कि मैं आया कहाँ से हूँ।

सवाल हमेशा एक ही होता।

“इसे अब तक किसी ने दीक्षा क्यों नहीं दी? किसी ने इसे अपनी छत्रछाया में क्यों नहीं लिया?”

उन्हें मैं एक अनगढ़ पत्थर दिखता था, जिस पर अब तक किसी ने काम नहीं किया था।

अलग-अलग दिशाओं से न्योते आए, लोग क़रीब आए, प्रस्ताव आए। अक्सर वे ऐसे माहौल से निकलते थे जिसका संस्कृति, इतिहास या सच्चे भीतरी विकास से कम ही लेना-देना था। वे ऐसी दुनियाएँ थीं जो जी-हुज़ूरी, दबदबे और महज़ ताक़त के इस्तेमाल पर चलती थीं।

मैं उन्हें आदर से देखता रहा, मगर दूर से।

कुछ कमरे थे जिनमें मैं दाख़िल नहीं होना चाहता था।

और मैं उनमें दाख़िल नहीं हुआ।

फिर एक दिन एक फ़ोन आया।

वे जीनो दोमानिको थे, ज़िंदगी के सच्चे उस्ताद।

यूनिवर्सिटी के प्रोफ़ेसर, जिन्होंने ख़ुद को पढ़ाने के लिए समर्पित करना चुना था। उनके पास बात कहने की वह दुर्लभ नफ़ासत थी जो न सिखाई जा सकती है, न जिसकी नक़ल की जा सकती है। बातचीत के कुछ ही पलों में मैं एक बात समझ गया, जो उस वक़्त मुझे बेतुकी लगी थी और जिसे मैं आज भी मानता हूँ:

मैं अभी-अभी उस आदमी से मिला था जिसे मैं अपने विकास का एक अहम हिस्सा सौंपने वाला था।

उन्होंने मुझे रात के खाने पर बुलाया।

वह कभी रिझाने की कोशिश नहीं थी, न कोई औपचारिक पाठ। जीनो के पास एक ख़ास देन थी: वे आत्माएँ और दिमाग़ पढ़ लेते थे। मैं तो शायद उनके लिए खुली किताब था।

उन्होंने कभी नहीं बताया कि उनकी भूमिका क्या है, न यह कि वे किस परंपरा से आते हैं। बस एक वाक्य मेरे पास छोड़ गए, जिसे मैं कभी नहीं भूला:

“एक दिन, जब तुम मुझे सचमुच देखोगे, पर्दों के साथ या उनके बिना, तब जान जाओगे कि मैं कौन हूँ और कहाँ हूँ।”

नौसिखिया होते हुए भी मैं उन शब्दों का अर्थ समझ गया।

मैं एक मंदिर का दरवाज़ा खटखटाता आदमी था, जो रोशनी माँग रहा था। भौतिक रोशनी नहीं, क्योंकि हम दोनों में से कोई बिजली कंपनी में काम नहीं करता था, बल्कि वह रोशनी जिसमें आदमी ख़ुद को ज़्यादा साफ़ देख पाता है।

स्वागत का पहला इशारा जीनो ने किया।

फिर आए तोनीनो।

संस्था की सबसे सम्मानित हस्तियों में से एक। उन्होंने मुझे बस थोड़ी देर परखा और फिर वही सवाल पूछा जो मैं पहले कई बार सुन चुका था।

“इसे पहले किसी ने क्यों नहीं देखा? इतने बरस यह कहाँ था?”

जवाब सीधा था।

“यह कोसेंज़ा में काम करता है। रेज्जो कालाब्रिया में पैदा हुआ। आधी दुनिया को जानता है। लोग इसे चाहते हैं। और यह हम में से एक है। फ़र्क़ बस इतना है कि कैथोलिक बपतिस्मे के बाद इसे कोई और दीक्षा नहीं मिली।”

इतना जवाब काफ़ी था।

मुझे सही ढंग से और सही समय पर वह राह शुरू करने दी गई जो विधवा के पुत्रों के लिए रखी गई है।

उस पल के बाद जीनो ने कभी मेरा हाथ नहीं थामा।

उन्हें ज़रूरत ही नहीं थी।

उनकी एक नज़र और दो-चार शब्द काफ़ी थे। उनके साथ एक चुप्पी में पाँच सौ पन्नों की किताब से ज़्यादा सीख समा सकती थी।

फिर वह दिन आया।

वे मुझे वहीं मिले, बेंचों के बीच।

चुप। लगभग कठोर।

वह जगह एक ख़ास मुद्रा माँगती थी, पहले भीतर की, फिर बाहर की।

चिंतन-कक्ष के बाहरी हिस्से में, खोए क़दमों के हॉल में, एक छोटे-से विराम के दौरान हम अगल-बग़ल आ खड़े हुए। वे ज़्यादा कुछ कहे बिना मेरे पास आए। फिर भी उस पल हम दोनों ने एक ही भावना महसूस की।

एक भावना जो कभी फीकी नहीं पड़ी।

तैंतीस साल बाद, वह अब भी यहीं है।

शायद इसलिए कि कुछ मुलाक़ातें अतीत की नहीं होतीं।

हम जब-जब उन्हें याद करते हैं, वे हमें दीक्षा देती रहती हैं।

TFA
फर्दिनांदो फ्रेगा

पुनश्च

यह कहानी लिखने के बाद मुझे लगा जैसे पच्चीकारी का एक असली टुकड़ा छूट गया है। रात में कुछ घंटों का चिंतन यह समझने के लिए काफ़ी था कि वह क्या था।

उन गर्मियों में जीनो समुद्र किनारे अपने बँगले में ठहरे हुए थे। वे मुझे कई बार आने का न्योता दे चुके थे और एक शाम आख़िरकार मुझे उनका दरवाज़ा खटखटाने का मौक़ा मिल ही गया।

उन्होंने ऐसे स्नेह से मेरा स्वागत किया जिसे मैं कभी नहीं भूला, और उसी मौक़े पर मेरी मुलाक़ात तेरेसा से हुई, उनकी ज़िंदगी की औरत से।

वे जवान थीं, नफ़ीस, और स्वभाव से ही सौम्य। वे उन लोगों की जमात में नहीं थीं जो दूसरों को प्रभावित करने की फ़िराक़ में रहते हैं। कुछ ही मिनट काफ़ी थे उनकी जीवंत बुद्धि को भाँपने के लिए, और उसके साथ सामने खड़े इंसान को समझ लेने की एक दुर्लभ क़ाबिलियत को।

वे बैंकिंग में काम करती थीं और ज़िम्मेदारी के एक पद पर थीं। बाद के बरसों में मैंने उन्हें अच्छी तरह जानने वाले दोस्तों और सहकर्मियों से हैरान कर देने की हद तक मिलती-जुलती बातें सुनीं: तेरेसा के पास एक असाधारण सहज-बोध था, और यह लगभग फ़ौरन आँक लेने की ग़ज़ब की क़ाबिलियत कि कौन कितना भरोसेमंद है।

हम दोनों के बीच अपने-आप एक तालमेल बन गया।

यह समझना आसान था कि हम दोनों एक ही इंसान को दिल से चाहते थे। ज़ाहिर है, अलग-अलग ढंग से, मगर तह में वही एक स्नेह लिए।

मुझे दिल की एक बहन मिल गई थी, जिसका मैं ख़याल रखूँ। उन्होंने ऐसी बातें कभी शब्दों में नहीं कहीं, फिर भी मुझे अक्सर लगता था कि उन्होंने भी कुछ वैसा ही पहचाना है।

मगर उस मुलाक़ात का एक और भी अहम असर हुआ।

उसने एक ऐसे यक़ीन को पक्का कर दिया जिसे वक़्त ने कभी झुठलाया नहीं: अच्छा गुरु लगभग हमेशा उस औरत की आँखों से ज़ाहिर होता है जो उसके साथ चलती है। वह माँ की जगह नहीं लेती, न माँ से गड्डमड्ड होती है। वह उस आदमी की इंसानी तस्वीर पूरी करती है।

और मेरे गुरु ऐसे ही आदमियों में से थे।

*सादर,*

*फर्दिनांदो फ्रेगा*